PEER-REVIEWED REFEREED JOURNAL
ISSN 2231-0479-SAMAGAM
RNI MPHIN/2000/02531
Po.Reg. MP/BPL/4-188/2021-24

दिसम्बर-2023। मूल्य पचास रुपये। 15 तारीख को प्रकाशित। पृष्ठ संख्या 48

समागम

जीत बेमिसाल

163 **66** **01**

ISSN 2231-0479

समागम

peer-reviewed (refereed) journal | http://samagamresearchjournal.com

वर्ष-23 /अंक-11/दिसम्बर-2023 | क्वान्तोंग(भारत अध्ययन) विश्वविद्यालय, चीन से हिन्दी जर्नल के रूप में 'समागम' को मान्यता प्राप्त

भीतर के पन्नों पर

हस्तक्षेप 5-6

- शिवराज की अगुवाई में जीत, मोहन को कमान

चुनाव : 2023 7-12

- मध्यप्रदेश में प्रचंड जीत का असली नायक कौन ?/सिद्धार्थ शंकर गौतम
- आदिवासी वोट क्यों शिफ्ट हुआ बीजेपी की ओर ?/अंजन कुमार चौधरी
- जमीनी आवाज कमलेश डोडियार विधानसभा में/ कृष्णकांत शुक्ला

शोध विमर्श 13-45

- रविदास के काव्य में समन्वयवादी दृष्टि/डॉ. नीरू कुमारी
- मन्नू भंडारी की कहानियों में दाम्पत्य-जीवन/गीता
- शिवमूर्ति की कहानियों में स्त्री-चेतना/वशिष्ठ अशोक कुमार आर. आर.-प्रो. डॉ. उद्धव भंडारे
- स्त्री-विमर्श का आधारभूत ढाँचा/श्रेयश सोनकर
- अस्पृश्यता एवं उसका बदलता स्वरूप: एक अध्ययन/कामिनी सूत्रकार
- मीडिया का स्वरूप और सैद्धांतिक विवेचन/प्रिती भीमराव राऊत
- पुरातन साहित्य एवं समाज में किन्नरों की भूमिका : विवेचन/डॉ. प्रतिभा जोशी
- अट्ठारहवीं शती की हिन्दी-उर्दू कविता का शिल्प/शकीला
- वेणी के पदों की मूल संवेदना और गुरु ग्रंथसाहिब/डॉ. गौरव तिवारी
- उषादेवी मित्रा की कथा में नारी चेतना की आवाज/डॉ. हेमलता काटे
- 21वीं सदी की कहानियों में चित्रित परिवेश/रूपल उपाध्याय
- ग्रामीण विकास में सामुदायिक रेडियो की भूमिका/डॉ. रजनी मान

मनोज कुमार
सम्पादक

प्रो. (डॉ.) विशाला शर्मा
सहयोगी सम्पादक

विषय-विशेषज्ञ

प्रोफेसर के.जी. सुरेश कुलपति, माखनलाल चतुर्वेदी राष्ट्रीय पत्रकारिता एवं संचार विश्वविद्यालय, भोपाल

गिरिजाशंकर वरिष्ठ पत्रकार एवं राजनीतिक विश्लेषक, भोपाल

जगदीश उपासने अध्यक्ष, प्रसार भारती भर्ती बोर्ड, भारत सरकार

प्रो. (डॉ.) सुधीर गव्हाणे पूर्व कुलपति, यशवंतराव चव्हाण महाराष्ट्र मुक्त विश्वविद्यालय, महाराष्ट्र

प्रो. (डॉ.) च्यांग चिंग खुई विभागाध्यक्ष, हिन्दी विभाग, बीजिंग विश्वविद्यालय, चीन

विवेक मणि त्रिपाठी असिस्टेंट प्रोफेसर (भारत अध्ययन) क्वान्तोंग विदेशी भाषा विश्वविद्यालय,चीन

डॉ. सोनाली नरगुंदे विभागाध्यक्ष, पत्रकारिता एवं जनसंचार अध्ययनशाला देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इंदौर

डॉ. गोविंद बुरसे विभागाध्यक्ष हिन्दी विभाग, शिवाजी महाविद्यालय, कन्नड़, औरंगाबाद, महाराष्ट्र

डॉ. सरोज चक्रधर
सहायक प्राध्यापक, हिन्दी शासकीय नवीन कन्या महाविद्यालय, गोबरा नवापारा, रायपुर, छग

डॉ. आरफा राजपूत एसोसिएट प्रोफेसर, सिनेमा संकाय जी फिल्म स्कूल, नोएडा,यूपी

आवरण : बंशीलाल परमार

आकल्पन : अपूर्वा दत्ता कोल्हारे
सहयोगी समन्वयक (अवैतनिक)

सदस्यता : वार्षिक सदस्यता (व्यक्तिगत) : 6 सौ रुपये मात्र ▸ वार्षिक सदस्यता (संस्थागत) : 2 हजार रुपये मात्र (पंजीकृत डाक से)

सम्पर्क : 3,जूनियर एमआयजी, द्वितीय तल, अंकुर कॉलोनी, शिवाजीनगर,भोपाल-(मप्र)462016 E-mail:samagam2016@gmail.com

3 स्वामी, मुद्रक एवं प्रकाशक कृति अग्रवाल द्वारा 3, जू. एमआईजी, द्वितीय तल, अंकुर कॉलोनी, शिवाजीनगर, भोपाल से प्रकाशित एवं तारा ऑफसेट प्रिंटर्स, शॉप नं.-4, जोन वन एमपी नगर भोपाल से मुद्रित. *सम्पादक- मनोज कुमार *अवैतनिक मानसेवी . प्रकाशित सामग्री के लिए सहमति अनिवार्य नहीं. विषय विशेषज्ञ अवैतनिक एवं समस्त वैधानिक जवाबदेही से मुक्त

शोध विमर्श

उषादेवी मित्रा की कथा में नारी चेतना की आवाज

डॉ. हेमलता काटे
हिंदी विभाग,
बाळासाहेब देसाई कॉलेज, पाटण

शोध-सार : उषा देवी मित्रा 19वीं सदी के लेखिकाओं में स्थान रखने वाली प्रमुख लेखिका हैं। उन्होंने विविध विधाओं में लेखन किया हैं। परंतु उनके साहित्य का केंद्र बिंदु स्त्री जीवन रहा है। संक्रांति काल की लेखिका होने के बाद भी उषा देवी मित्रा के साहित्य में नारी को लेकर नए विचार प्रस्तुत हुए हैं। कारण उषा जी ने नारी के आंतरिक दर्द को नजदीक से देखा है। उस समय नारी के प्रति समाज में अनेक रुढियां-परम्पराएं मौजूद थी, जिसके परिमाण स्वरूप नारी को दर्द-पीड़ा ही भुगतनी पड़ती थी। जिसमें विशेषत: बाल-विवाह , विधवा, परित्यक्ता का दर्द अधिक मात्रा में यातनादायी होता था। इसी दर्द को गहराई से विद्रोहात्मक रूप में व्यक्त कर, नारी अस्तित्व को व्यक्ति का रूप देने का प्रयास उषा देवी मित्रा के कथा साहित्य में मिलता है।

बीज शब्द : विधवा, परित्यक्ता, बाल-विवाह, पातिव्रत, घृणा आदि।

प्रस्तावना : 19 वीं शताब्दी के प्रारंभ में नारी चेतना की आवाज बनकर लेखन करने वाली लेखिकाओं में उषा देवी मित्रा का नाम आ जाता है। यह ऐसा कालखंड है, जहां नारी अनेक रीति-रिवाजों के बीच जकड़ी हुई थी। कुछ रीति-रिवाजों को स्वयं उषा जी को भी निभाना पड़ा। इसीलिए उनकी शादी उम्र के चौदहवें साल में हुई थी। शिक्षित परिवार में जन्म होने के कारण उनका साहित्य जगत में प्रादुर्भाव सहजता से हुआ। इसी शिक्षा का ही परिमाण कह सकते हैं तत्कालीन सामाजिक परिस्थिति के खिलाफ जाकर ही वह नारी चेतना को लेकर लेखन करती रहीं।

> उषा जी के साहित्य में एक विशेष मानसिक प्रतिक्रिया का चित्रण मिलता है। समाज में विधवा स्त्रियों की स्थिति, उनकी मर्यादा, कामना, नैतिकता- अनैतिकता , आशा-निराशा, सुख-दुख और आदर्श व कामनाओं की टकराहट और उनसे जूझते हुए पात्रों की मूर्तियां मिलती हैं।

वह प्रसिद्ध कवि रवींद्रनाथ ठाकुर की पोती हैं। इसके बावजूद तत्कालीन सामाजिक परिस्थिति से लड़ने वाली स्त्री साहित्य के रूप में अपना अस्तित्व निर्माण करके गयीं। इस संदर्भ में डॉ. पत्रा के विचार सही लगते है- 'एक पुष्प खिलने के साथ ही मुरझा गया और लेखिका को अभावमय परिस्थितियों में नारी की आकांक्षाओं के स्वरूप का नवीन बोध हुआ है। इसलिए उषा जी के साहित्य में एक विशेष मानसिक प्रतिक्रिया का चित्रण मिलता है। समाज में विधवा स्त्रियों की स्थिति, उनकी मर्यादा, कामना, नैतिकता- अनैतिकता , आशा-निराशा, सुख-दुख और आदर्श व कामनाओं की टकराहट और उनसे जूझते हुए पात्रों की मूर्तियां मिलती हैं।'[1] इसीलिए तो इनकी कहानियों में नारी चेतना की आवाज सुनाई देती है। उषा मित्रा जी ने सात कहानी संग्रह और उपन्यास लिखे हैं। कहानी संग्रह में 'रात की रानी', 'नीम-चमेली', 'महावर', 'आंधी के छंद', सांध्य पूरबी', 'मेघ मल्हार', 'रागिनी' हैं। उपन्यासों में 'वचन का मोल', 'पिया', 'जीवन की मुस्कान', 'पथचारी', 'सोहिनी' 'नष्टनीड़', 'संमोहिता' हैं।

इन कथा में तत्कालीन नारी जीवन की संवेदना दिखाई देती हैं। अर्थात नारी के पीड़ा की खोज तथा उससे नारी जीवन में बदलाव की अपेक्षा उनके कथा में स्पष्ट होती है। इस दृष्टि से जगदीश चतुर्वेदी के विचार महत्वपूर्ण लगते हैं। वे कहते है- 'उषादेवी मित्रा की कहानियों में स्त्री के प्रति विशेष लगाव नजर आता है। इसी लगाव की रोशनी में उन्होंने अंतर्जातीय विवाह, वेश्याओं की समस्या, परित्यक्ता नारी की समस्याओं, वर्णव्यवस्था के स्त्री जाति पर पड़ने वाले प्रभावों आदि पर श्रेष्ठ सामाजिक

कहानियां लिखी हैं।'[2] अत: उषाजी की कहानियां तत्कालीन सामजिक क्षेत्र में हुए बदलाव का दस्तावेज हैं।

उषा जी का समय स्त्री के लिए संघर्षशील रहा, कारण इस समय में स्त्री अस्तित्व बस चुल्हे चौके तक ही सीमित था। परिमाणस्वरूप उसे अनेक बंधनों में बांध कर रखा था। इसके बारे में 'देश के कई हिस्सों में लड़कियों को 'भार' समझा जाता है और बहुत ही कम उम्र में विवाह के लिए तैयार किया जाता है। समाज में महिला की भूमिका की धारणा, लड़कियों की कीमत, विवाह से संबंधित सामाजिक और धार्मिक प्रथाओं से जुडे संरचनात्मक और आर्थिक कारण बाल विवाह को संभव बनता है।'[3]

स्त्री को व्यक्ति नहीं तो बोझ के रूप में एक वस्तु समझा जाता था। और यह बोझ जल्दी हलका करने का प्रयास प्रत्येक बेटी के मां-बाप का रहता है। इसीलिए उस समय लड़कियों के बाल विवाह होते थे और वे भी बिल्कुल नाबालिक उम्र में होते थे। वह विचारों से प्रगल्भ होने से पूर्व ही उस पर ससुराल वालों के जिम्मेदारी का बोझ आ जाता। अत: वह चाहकर भी कुछ नहीं कर सकतीं। बाल विवाह में लड़की की उम्र कम ही होती है और लड़के की उम्र ज्यादा होती थी। जिसके परिमाणस्वरूप विधवा का अभिशप्त जीवन नारी को जीना पड़ता था। उषा जी ने अपनी कथा साहित्य 'वचन का मोल', 'पिया', 'सम्मोहिता' आदि उपन्यास, तो 'मातृत्व', 'भूल' आदि में विधवा नारी के भीतरी पीड़ा को शब्दबद्ध किया है। वह दर्द भी आक्रोश के रूप में चित्रित हुआ है। 'संमोहिता' में जो विधवा चित्रित है, वह विधवा के विद्रोहात्मक रूप की परिचायक है। जिसका नाम कुंतला है। वह पूछती है, 'केवल विधवा के लिए क्यों? ब्रह्मचर्य तो मनुष्य मात्र के लिए उचित है, उत्तम है। किंतु समाज ने क्या कभी संयम व ब्रह्मचर्य की शिक्षा का सुयोग एवं उसे समझ सकने का अवसर विधवा को क्यों दिया है? बचपन से विलासिता में पालन-पोषण कर एक दिन, नहीं-नहीं, छोटे एक मुहूर्त में समाज चाबुक खड़ा हो जाता है, सजा देने के लिए-नहीं-वह हाथ में कुछ नहीं डाल सकती- सादी बिना कोर की साड़ी, कान, नाक, हाथ सूना रखो। निरामिष भोजन करो- यह कैसी बात है? तब उस सद्य विधवा के मन में उस चाबुक के प्रति कौन-सी अनुभूति स्वत: उत्पन्न हो सकती है? कितनी ही बिचारी बिना समझे ही वैधव्य के नियमों का पालन करती हैं- लोक नेत्रों के सामने। परंतु शायद उनके मन का प्राण इन नियमों को घृणा ही करता हो।'[4]

यह छटपटाहट केवल कुंतला की नहीं वो तमाम विधवा नारी की है, जो इस जकड़न से मुक्ति चाहती हैं। उषा जी ने कुंतला के माध्यम से यह मुक्ति की आवाज बाहर निकाली है और विधवा के प्रति समाज में जो रुढ़ियां हैं, उसे बदलने की अपेक्षा की है। केवल बदलने की नहीं तो मुक्ति की छटपटाहट उनकी कथा साहित्य की नारियों में दिखाई देती है। 'पिया' कहानी की बाल विधवा नीलिमा का आक्रोश इस प्रकार मिलता है, 'मैं ही तो हूं इस घर की छूत। कहती तो जाती हूं विमला बुआ के साथ मुझे शहर जाने दो। सो न जाने देगी। यहां रहो और इनकी विदुषी लड़की की सेवा करो। नहीं करती मैं कुछ, कर लो जो तुम्हारे जी में आवे। मैं किसी की क्रीत - दासी नहीं हूं। चौबीस घंटे ऐसी बातें नहीं सह सकती। क्या मैंने कह दिया था कि ईश्वर, मुझे विधवा कर दो और मैं भूखी-प्यासी काम करती रहूं? जो तुम सदा ताना दिया करती हो? हाथ-पैर है, काम कर लूंगी; और सुख से दो रोटी भी मिल जायेगी।'[5] इसमें विधवा नारी की वास्तविक अवस्था के साथ उसके अंतर मन का दर्द व्यक्त होता नजर आता है जिसके परिमाणस्वरूप बदलाव की छटपटाहट उसमें बढ़ती गयी और उनसे समाज को यह एहसास दिलाया कि अगर समाज में परिवर्तन नहीं होगा तो नारी की शक्ति अपने आप यह अधिकार प्राप्त कर लेगी। इसे 'भूल' कहानी में व्यक्त किया है। लेखिका लिखती हैं, 'भूल भूल, केवल मोह! उस मिथ्या, अभिशप्त पातिव्रत का विनाश एक दिन हो जाएगा और नारी की वास्तविक शक्ति एक दिन चमक उठेगी, अपने यथार्थ रूप को वह देख पाएगी।अपने-आप पर निर्भर अपनी को क्रीतदासी, विनीत सेविका का उस दिन अवसान हो जाएगा। रहेगी मात्र नर की शक्ति कल्याणमयी नारी।'[6]

विधवा की तरह परित्यक्ता जीवन भी नारी के लिए एक प्रकार से अभिशाप ही हैं। पुरुष जब चाहे अपनी मर्जी से शादी करता है और कुछ कमियां ङ्कखामियां अगर स्त्री में नजर आए तो उसे अपनी मर्जी से छोड भी देता है। उस वक्त वह उस स्त्री की मन की अवस्था को नहीं देखता। केवल बच्चा नहीं होता, वह कुरूप है, वह पवित्र नहीं है आदि कारणों को सामने कर किसी दूसरी स्त्री से संबंध बनकर उसे परित्यक्ता करता है। स्त्री शक्ति की द्योतक सीता को ही यह परीक्षा देनी पडी। राम को त्यागने के बाद वाल्मीकि के संरक्षण में परित्यक्ता जीवन बिताना पड़ा। अत: नारी की इस पीड़ा को देख उषा जी ने उसे अपने कथा साहित्य में स्थान देने का प्रयास किया। उसे व्यक्ति रूप में अस्तित्व देने का प्रयास किया है। 'परिचय' कहानी में ऐसी नारी को चित्रित किया है। जिसमें उसका स्वाभिमान प्रस्तुत हुआ है,' चाह ने मुझे, तुम्हारा चित्र बनाने का अधिकार दिया है। मैं चाहती हूं; पत्नी का अधिकार तो नहीं मांगती। तुम्हारे स्पर्श अथवा बातों के लिए मैं लालायित नहीं हूं। तुमसे मांगने-जांचने की जरुरत नहीं पड़ी। यह प्रेम-यह चाह मेरी निज संपत्ति है। प्रतिदान के लिए किसी भी दिन भिखारिणी होकर तुम्हारे द्वार पर न जाऊंगी। यह मेरे व्यक्तिगत जीवन का एक अंश है, यहां कि अधिकारिणी मैं हूं। अपनी उस स्वाधीन सत्ता की मैं एकछत्र रानी हूं।'[7]

इस तरह समाज ने विधवा, परित्यक्ता को परम्परा की सलाखों में जकड़ने का प्रयास किया, परंतु मूलत: नारी शक्ति का रूप है। स्वाभिमान और मेहनत यह गुण तो उसमें निसर्गत: ठूंस-ठूंस कर भरे हुए है। इसीलिए वह विधवा नारियों के कुप्रथाओं पर प्रहार करती नजर आती हैं। 'पिया' कहानी में उषा जी लिखती हैं, क्या विधवा केवल अश्रद्धा की पात्र होती है? विधवा होना क्या उसका अपराध है? उसी मां ने मुझे जन्म नहीं दिया, जिसने कविता को दिया है? फिर ऐसा पार्थक्य क्या?'[8] इसीलिए इनके कथा साहित्य में नारी स्वाभिमानी तथा दृढचित्ता के रूप में मिलती है। नारी का यह रूप 'पपीहरा', 'मातृत्व', 'प्यासी', 'खिन्न', 'पिपासा', 'मन की देन' आदि अनेक कहानियों में

ISSN 2231-0479
peer-reviewed (refereed) journal

मिलता हैं। 'प्यासी' कहानी की सहाना कहती है,'जबरन ही ? किंतु नहीं- मैं नहीं कर सकती थी, वैसी भीख की झोली से घृणा करती हूं, आंतरिक घृणा। प्रेम-प्यार आदर की वस्तु जरूर है, पर मांगने-जांचने की नहीं, उसके लिए दूसरे से झगड़ना, छिः-छिः।'[9]

नारी जागृति का रूप उषा जी कहानी साहित्य में मिलता है। 'नष्टनीड़' की कल्पना आधुनिक जागृत नारी का सशक्त रूप है। वह कहती हैं, 'वे मुझसे घृणा करते हैं और घृणा ने मेरी घृणा खींच ली है, जीजी! एक ऐसे आदमी को मैं प्रेम करूंगी, जो कि मुझसे घृणा करते हों? अवहेलना करें? क्यों? क्या मेरे मन की स्वामिनी मैं नहीं हूं? ...ऐसे आदमी को तुम्हारी कल्पना पति कहकर स्वीकार नहीं कर सकेगी। मैं आदमी हूं, मेरा भी मान-सम्मान है।'[10]

निष्कर्ष : निष्कर्षतः कह सकते हैं कि उषा मित्रा भले ही उस समय का प्रतिनिधित्व करती हैं, जिस समय स्त्री का समाज में कोई अस्तित्व नहीं था। इसीलिए तो उषा मित्रा की कहानियां नारी चेतना की आवाज बनकर उभरी है। कारण उन्होंने नारी की वेदना, पीड़ा और दर्द गहराई से महसूस किया है। जो उनकी कथा साहित्य में प्रस्तुत हुआ है। परंतु इस वेदना के मूल में जो बदलाव की अपेक्षा है, वह विशेष महत्व रखता है। भले ही उसका रूप विद्रोहात्मक है, परंतु नारी की भावनाओं को संवेदना को व्यक्त करनेवाला हैं। कुछ गलती न होते हुए भी नारी को जो विधवा, परित्यक्ता का जीवन जीना पड़ता है, यह गलत है। इसका एहसास इनकी कथा साहित्य में मिलता है, कारण स्त्री भी एक व्यक्ति है, उसका भी मान-सम्मान होता है। इस तरह उषा मित्रा का कथा साहित्य 'नारी चेतना' की आवाज है।।

संदर्भ :

1. डॉ. पन्ना - उषादेवी मित्रा : युग और साहित्य , पृ. 15
2. चतुर्वेदी, जगदीश, स्त्रीवादी साहित्य विमर्श , पृ. 134
3.किशोर वय सशक्तिकरण टूलकिट,- यूनिसेफ और ब्रेकथ्रू नई दिल्ली 2016, बाल विवाहः संदर्भ तय करना- बाल विवाह क्या, क्यों और कैसे सीएसओ सहयोगियों द्वारा बाल विवाह ने हस्तक्षेप की पहल करने हेतु रेडी रेकनर पृ.7
4. मित्रा, उषादेवी - सम्मोहिता पृ.73
5. मित्रा, उषादेवी- पिया पृ. 42-43
6. मित्रा, उषादेवी - आंधी के छंद पृ. 62-63
7. मित्रा, उषादेवी- पिया पृ. 25-26
8. वही, पृ. 28-29
9. मित्रा, उषादेवी - आंधी के छंद पृ. 25
10. मित्रा, उषादेवी- नष्ट नीड़, पृ. 66

स्त्री-विमर्श का...

(पृष्ठ 25 का शेष)

बोले न। यह भी एक तरह की घुटन है जिसमें स्त्री को अपने ही घर में खाने की स्वतंत्रता नहीं है और स्त्री को बासी रोटी खाने को मिले जो बच गयी थी। यह भी एक महत्वपूर्ण प्रश्न है। जिसका समाज पर ध्यान नहीं जाता है। उसे केवल लज्जा, शर्म और मान-मर्यादा का पालन करना होता है।

समाज में स्त्री और पुरुष एक गाड़ी के दो पहिये हैं, जब दोनों ठीक और बराबरी पर चलेंगे तभी समाज की तरक्की होगी। स्त्री विमर्श स्त्रियों को उपेक्षित से सशक्तिकरण की तरफ ले जाने का काम रह रहा है। स्त्री विमर्श के प्रश्नों ने समाज को नई विचारधारा से सोचने के आयाम दिए हैं जिससे समाज में एक नई ऊर्जा आएगी जो केवल समानता पर आधारित होगी। स्त्री विमर्श में समय के साथ नये प्रश्न जुड़ते जा रहे हैं, उनको हल करना हमारा दायित्व है।

संदर्भ

1. हंस अक्टूबर 1996 पृष्ठ. सं. 76
2. मीरा बाई पदावली, परशुराम चतुर्वेदी पृष्ठ. सं. 76
3. सीमोन द वोउवार, स्त्री उपेक्षिता पृष्ठ. सं. 212
4. कुमार राकेश, नारीपादी विमर्श, पंचकूला (हरियाणा), आधार प्रकाशन संस्करण 2004 पृष्ठ. सं. 75
5. रजवार डॉ. शीला, स्वतंर्त्योत्तर कथा साहित्य में नारी के बदलते संदर्भ, दिल्ली इस्टर्न बुक लिंकर्स पृष्ठ. सं. 74
6. नसरीन तसलीमा, औरत के हक में, दिल्ली, वाणी प्रकाशन संस्करण 1993 पृष्ठ. सं. 99
7. डॉ. शशिकला त्रिपाठी, उत्तरशती के उपन्यासों में स्त्री, विश्वविद्यालय प्रकाशन वाराणसी, प्रथम संस्करण 2006 पृष्ठ. 90
8.एक जमीन अपनी, चित्रा मुदगल पृष्ठ. सं. 182
9.एक जमीन अपनी, चित्रा मुदगल पृष्ठ. सं. 214
10.अवान्तर कथा, अनामिका, प्रका. किताबघर नई दिल्ली, पृष्ठ. 87

किताब प्रकाशन के लिए आमंत्रण

'लोक प्रकाशन' आपकी किताब प्रकाशित करने के लिए तैयार है. आइएसबीएन के साथ गुणवत्तापूर्ण किताबें जन-सहभागिता से प्रकाशित करने की योजना.

अधिक जानकारी के लिए आप हमें मेल कर सकते हैं- k.manojnews@gmail.com